मनुष्य बनो

मार्च
१९६१

३/९१

शरणा

शुभ संकल्प,

क्षमा,

प्रेम,

निष्काम कर्म,

ब्रह्म

पालन

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टिकोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार, सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायेगा।

४—किसी धर्म पन्थ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जांय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ-साफ अवश्य लिखना चाहिए। उत्तर के लिये जवाबीकार्ड आना चाहिए वी० पी०पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायेगी। इसका वार्षिक मूल्य २०.०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुंचे तो पहले अपने यहाँ डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर न मिले व अगला अंक निकलने के एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजनी चाहिए। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ-साफ लिखना चाहिए। और पते की तबदीली भी।

—प्रकाशक

R. S.

ओ३म पूर्णमद पूर्णमिदं: पूर्णात्पूर्णमदुच्यते
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

मनुष्य बनो

वर्ष ४०	मार्च १९९१	अङ्क ६

R. S.

गाफिल शब्दावली से—

शब्द

क्या फिकर मरने का उसको, प्रेम ने मारा जिसे।
क्या फिकर तरने का उसको, सत्गुरु तारा जिसे ।१।
जान की बाजी लगा कर, इस गली में आये थे।
क्या रहा अब पास इसके, सर को है हारा जिसे ।२।
बात करने वालो को, इसका मजा आता नहीं।
पा सके हरगिज नहीं, सिकन्दर व दारा जिसे ।३।
है चढ़ाई का यह रस्ता, चलते-चलते थक गये।
एक दिन पहुँचेगा वह, तेरा सहारा है जिसे ।४।
मुर्शिदे कामिल का दामन, जिसने पकड़ा दिल से है।
डूब वह सकता नहीं, इसने उभारा है जिसे ।५।
जिन्दगी जिसने गुजारी हो, इबादत में सदा।
मौत क्या उसे डराये, तुमने संवारा है जिये ।६।
तैरता रहता हमेशा, कमल के मानिन्द वह।
'गाफिल' क्यों डूबेगा वह, तुमने पुकारा है जिसे ।७।

एक कहूँ तो है नहीं, दूजा कहूँ तो गार।
जैसा है तैसा रहै, कहैं कबीर पुकार।।

—×—

छियानवेवां वचन

प्रेम हर काम का शक्तिशाली साधन है।

प्रेम से, प्रेम में, प्रेम के विचार से, प्रेम के प्रभाव से, प्रेम के आवेश में आकर मनुष्य कठिन से कठिन काम को आसानी से कर लेता है। जो बात दूसरी तरह पर असंभव होती है, वह उसके द्वारा सरल हो जाती है।

प्रेम को लोगों ने अंधा बताया है और प्रेम को बावला भी कहा जाता है। अंधे अपनी टेक रखते हैं। चूंकि प्रीति आँखों के दो चार होने से आती है, इसलिये इन्हें बेमुरौब्बत अर्थात् रुखाई का व्यवहार करने वाला बताया जाता है। दीवाने को विवेक नहीं रहता। उसका कोई विश्वास नहीं करता। वह जो कुछ न कर डाले वही थोड़ा है।

क्या प्रेम सचमुच अंधा और दीवाना है। एक दृष्टि से तो से विशेषायें उसमें पाई जाती हैं। वह अंधों और दीवानों की तरह किसी की नहीं सुनता लेकिन दूसरी दृष्टि से उसके दोष गुण मालुम होते हैं। वह अंधा नहीं है बल्कि सच्ची आंख वाला है। वह जिसको देखता है, उसी को देखता है। दूसरी ओर उसका ध्यान नहीं जाता और उसी एक को वह सब कुछ मानता और जानता है। यह अंतिम श्रेणी का वचन का पालन है। इसी प्रकार वह दीवानगी नहीं है जिस ओर उसका विचार चला गया, वह उसी ओर का हो गया। उसकी विवेक शक्ति एक ही ओर बढ़ती है। दूसरी ओर

उसका ध्यान नही होता। एक का होना और होकर रहना अच्छा है। अनेक को चित्त देना भ्रम, भ्रान्ति, दुख, और अशान्ति में पड़ना है। प्रेम अद्वैत है, वह द्वैत नहीं है! आत्मज्ञान के विषय में उससे अधिक और किसी से सहायता नहीं मिलती। यह उसका लक्षण है!

प्रेम हर प्रकार के कष्टों और क्लेशों को सहन करने की शक्ति रखता है। यही नहीं, किन्तु डाट फटकार सहने में उस जैसा दूसरा नहीं है। यह दुखों का सामना करता हुआ रहता है। वह डाट फटकार का लक्ष्य बना हुआ उनको अपनी बड़ाई मानता है।

प्रेम में अत्यन्त उदारता और निर्लोभता है। यह सब कुछ दे डालता हैं। इसमें कृपणता नाम का भी नहीं है। यह उसमें गुण है।

प्रेम राजा को भी अपने आधीन कर लेता है। यह अधीनता नही है किन्तु प्रबल शक्ति है जो मुर्दा शरीर में नई रूह फूँकने का चमत्कार दिखाता है। वह प्रेम ही है जो हर बुरी से बुरी वस्तु को अच्छा बनाने की निपुणता रखता है! इसी कारण से संतों, साधुओं, वैष्णवों और सूफियों ने प्रेम और भक्ति ही को अपनी सफलता का साधन माना हैं। और इन सबके मार्ग प्रेम मार्ग कहलाते है। जिसमें प्रेम आ गया उसको सफलता मिलने में कुछ भी संदेह नहीं रहता।

प्रेम भाव इक चाहिये, भेष अनेक बनाय।
चाहे घर में वास कर, चाहे बन बन जाय॥

प्रेम ही जीते जी मरने का मार्ग है। जीते जी किसी से मरा नहीं जाता मगर यह मरने तक की हिम्मत रखता है। बिना जीते जो मरे हुए सफलता किसके हिस्से में आई है

एक कवि का कथन है :—

तू मरने से डरता है गर, दीदार की ख्वाहिश न कर।
गर नहीं बिकता है खुद, फिर यार की ख्वाहिश न कर ॥

—×—

सत्तानवेवां वचन

ज्ञान

ज्ञान प्रेम है। प्रेम और ज्ञान में अन्तर नहीं है। ज्ञान का प्रारम्भ प्रेम से होता है और प्रेम का अन्त ही ज्ञान है। प्रेम क्या है! दिल देना ही प्रेम है। उपनिषद का वाक्य है:—

"ईशावास्यमिदं सर्वम् यत्किञ्च जगत्यां जगत्"

इसका अर्थ है "इस जगत में जो कुछ है वह ईश्वर से ढका हुआ है," अथवा "इस जगत को ईश्वर के विचार से ढक दे।" यह मन देने का विषय है। ईश्वर को मन दिया और उसी के विचार से सारे संसार को ढक दिया। संसार में जो कुछ है वह ईश्वर ही है। उसके सिवाय और कुछ नहीं है यह प्रेम है और यही ज्ञान है। सोच समझ कर देखो। ज्ञान और प्रेम में क्या अन्तर है? मन दिया गया और मन प्रेमी को केन्द्र बना कर उसी में ठहर गया। इसके सिवाय और ज्ञान क्या होगा?

उपनिषद फिर कहती है:—"तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः मागृधः कस्यस्विद्धनम्" "उसने जो कुछ दिया है उसी को भोग और किसी के धन का लालच न कर।" यह मन देने की विशेष है। जिसमें यह विशेषता आ जाती है उसी को ज्ञान का अधिकार है। इसके सिवाय जो तृष्णा और लोभ में फँसा हुआ घर घर मारा फिरता है उसे कैसे ज्ञान की प्राप्ति होगी!

उपनिषदों के इन दोनों शब्दों में असलियत का रहस्य है। पहली बात तो यह है कि ब्रह्म को यथेष्ठ रूप से समझकर उसी के भाव को इतना बढ़ा देना चाहिये कि सब में वही दीखने लगे। दूसरी बात यह है कि जब तक मनुष्य उसकी दी हुई सम्पदा से सन्तुष्ट न होगा, वह अपने हृदय के भाव से जगत को कभी न ढक सकेगा और न जगत को ब्रह्ममय या ब्रह्म सरूप देख सकेगा।

राधास्वामी मत इसी विचार से गुरू भक्ति पर जोर देता है। पहले सत्संग करके चित्त को एकाग्र और सन्तुष्ट बनालो ताकि वह गुरु से मिलकर एक हो जाय और फिर गुरु की दृष्टि लेकर इस जगत को गुरु मय देखने लग जाओ। ब्रह्म और गुरू एक ही अर्थ और अभिप्राय के शब्द है। ब्रह्म में और गुरू में भेद नहीं होता। यदि कोई भेद मानता हैं तो फिर आत्म ज्ञान के मार्ग में उसके आने की आवश्यकता नहीं है। हाँ, प्रारम्भ में सत्संग के बचन से इतना समझ लेना है कि ब्रह्म सामान्य चेतन है, जो व्यापक है और गुरू विशेष चेतन है, जो अपना तेज मानव शरीर में दिखा रहा है। अग्नि हर जगह है। लकड़ी में भी है, पानी मैं भी है, राख, मिट्टी और सब में है, लेकिन यह सामान्य अग्नि है। इससे न रोटी पके सकेगी और न उसका रूप ही दिखाई देगा। लकड़ी को चकमक पत्थर के रगड़ने और दियासलाई के घिसने से जो अग्नि पैदा होगी, वह न केवल अपना विशेष रूप दिखायेगी, किन्तु तुम्हारा खाना पका देगी और दोनों प्रकार से तुम्हारा लाभ होगा। यह गुरू धारण करने का मतलब है।

एक ओर तुम हो, दूसरी ओर ब्रह्म है। तुम आँख वाले हो। ब्रह्म सूर्य्य है। पहले अपनी आँख खोलो। उसका उपाय गुरू बतायेंगे और इस आँख के खुलते ही प्रेम रूपी सूर्य्य का

आप ही आप दर्शन मिलेगा। तुम ब्रह्म के साथ अपनी तुलना करके विवेक की सब बातों को एक एक करके उड़ाते जाओगे। उस समय स्वयं हो कह उठोगे कि **ब्रह्म हमसे अलग नहीं है।** आरम्भ में केवल इतना ही समझने की आवश्यकता है। यह ज्ञान मार्ग की भूमिका है। आगे और जो कुछ होगा, उसका वर्णन आगे के बचनों में व्याख्या सहित आयेगा।

ब्रह्म हम में है, गुरू हम में है। ब्रह्म या गुरू से अलग तहीं हैं और यह उसी प्रकार से है जिस प्रकार से अग्नि हर वस्तु में मौजूद है। वह तुम में भी है। तुम गर्मी से रहित नहीं हो। अग्नि की गर्मी ही जीवन की पहिचान है। अगर गर्मी नहीं तो तुम जिंदा कैसे रह सकते हो! होने को तो तुम में वह मौजूद है लेकिन समझने बूझने के लिये गुरू की सहायता की आवश्यकता है।

जिन लोगों को राधास्वामी मत के सुरत शब्द योग के अभ्यास से सम्बन्ध है, वह जानते हैं कि ब्रह्म या गुरु की खोज बाहर नहीं की जाती। भीतर ही की जाती है। यदि वह सच-मुच हमारे भीतर हैं, तो हम फिर उससे अलग कब हुये या हो सकते हैं! हाँ, भ्रम के वश जो चाहे वह कह लिया जाये, इससे हानि नहीं है।

जिसको वह मिला है, मिलता है या मिलेगा, उसको अपने ही भीतर मिला है, मिलता है और मिलेगा। बाहर न मिला है न मिलता है और न मिलेगा। परन्तु यहाँ सवाल यह है कि क्या वह बाहर नहीं है? इसका उत्तर उपनिषद् के वाक्य में दे दिया गया है। पहले मन को स्थिर करो। यह योग की क्रिया है। दूसरे उसी ख्याल से जगत के ढकने का प्रयत्न सोचो। फिर वही दृश्य ब्रह्म या गुरु के ख्याल में तुमको बाहर

भी दिखाई देने लगेगा और भीतर बाहर ब्रह्म ही ब्रह्म और गुरु ही गुरु प्रतीत होने लगेगा।

—×—

अठानवेवाँ वचन

व्यापक ब्रह्म

उपनिषदों में वर्णन है:—

'यदि वह पूर्ण आनन्द आकाश में व्यापक न होता तो जीवन और आनन्द का नाम निशान तक न होता।"

शब्द स्पष्ट हैं। जो कुछ है वही है उसके सिवाय और कुछ भी नहीं है वह पूर्ण है और हमारा जीवन उसी की खोज में लगा हुआ है। जब से हम पैदा हुये करोड़ों वर्ष या इससे भी अधिक समय से हम उसी की खोज कर रहे हैं, परन्तु वह हाथ नहीं आता है हाथ किस प्रकार से आये। हम तो उसे बाहर ढूंढ रहे हैं।

वस्तु कहीं ढूंढे कहीं केहि विधि आवै हाथ।
कहें कबीर तब पाइये, जब भेदी लीजै साथ॥

यह कारण है कि वह मिलता नहीं परन्तु क्या न मिलने से हमारी खोज स्थगित हो जाती है। राम राम कहो। हर वस्तु स्थिर हो जाती व ठहर जाती है, किन्तु इस खोज की चेष्टा एक क्षण के लिये भी हमसे अलग नहीं होती। हम शरीर में उसकी खोज करते हैं। हम चाहे जानें या न जानें, हम चाहे ज्ञानी हों या अज्ञानी, ब्रह्म का विचार एक पल भी हमसे अलग नहीं होता।

हम खाते पीते हैं, तृप्त नहीं होते और उससे उकता जाते

हमेशा के लिये सुखी कर दें। हम धन, मान, बल और राज्य के पीछे फिरा करते हैं, लेकिन इससे तृप्ति नहीं होती और आप ही आप मान जाते हैं कि यह वह वस्तु नहीं हैं जो असली सुख दे सकें। इसी प्रकार और भोगों का अनुमान लगा सकते हो। कौन मनुष्य संसार में ऐसा है जो छाती पर हाथ रख कर शपथ पूर्वक कह देगा कि बस! हमारी तृप्ति हो गई। हम और कुछ नहीं चाहते। ऐसा यहाँ एक मनुष्य भी नहीं है जिसको पूर्ण सुख मिला हो। जहाँ देखा वर्तमान अवस्था की शिकायत, राजा, प्रजा अमीर, फकीर सब ही तो शिकायत करते हैं। भ्रम में पड़ा हुआ धनी कंगाल को अपने से अधिक बड़ा समझता है। अज्ञान के वश में आया हुआ राजा कहा करता है कि मुझे तमाम दुनिया की फिकर है। मुझसे अच्छा तो प्रजा है कि उसको केवल अपनी ही चिंता रहती है। अभिप्राय यह कि दुनिया शिकायत की जगह बनी हुई है जिसमें एक भी आदमी ऐसा दिखाई नहीं देता जो शिकायत न करता हो। इनकी शिकायत भी ठीक है, क्योंकि इन सबके मन में किसी ऐसी वस्तु की चाहना है जो इन्हें नहीं मिलती और ये उसे बिना जाने पूछे, बिना सोचे समझे, बाहर और अपने से अलग ढूंढते हैं। यह कुरेद सबके मन में हैं और यह उस समय तक जाने वाली नहीं है, जब तक यह पूर्ण न हो जाय। इसी पूर्णता का नाम ब्रह्म है। इसी पूर्ण अवस्था को गुरू की प्राप्ति कहते हैं। क्या गुरू के जाहिरा धारण कर लेने से यह प्राप्त हो जाती है? कभी नहीं। यह केवल प्रारम्भिक सीढ़ी है और अभी तक तो गुरू की मुराद (अभिप्राय) भी ठीक तौर से समझ में नहीं आई है। केवल ब्रह्म ब्रह्म या अहं ब्रह्म कहने से होता क्या है! हाँ, ब्रह्म का नाम निस्संदेह सुन लिया गया। मगर यह न परोक्ष ज्ञान है न अपरोक्ष ज्ञान

है । गुरू की सेवा में आने जाने उठने बैठने से वाह्य ज्ञान और जबानी जानकारी का तो लाभ होगा, परन्तु जब तक गुरू से अन्तर मुखी साधन का भेद लेकर अपने ही अन्दर खोज न की जावेगी, तब तक हाथ क्या आयेगा ! कुछ भी नहीं ।

सच्चे गुरू की प्राप्ति अपने अन्दर ब्रह्म के स्थान पर होगी । जिस समय हमारा मन अपने अंदर ब्रह्माकार बनने लगेगा, उस समय यह समझ आयेगी कि गुरू और ब्रह्म से तात्पर्य क्या है । । उस समय साधन करने वाला आध्यात्मिक भावों के नशे में मस्त होकर नारा लगायेगा ।

भेदी लिया साथ कर, दीनी वस्तु लखाय ।
कोटि जन्म का पंथ था, पल में पहुचा जाय ।।
घटका पर्दा खोल कर, अन्तर कर दीदार ।
बाल सनेही सांइयां, आदि अन्त का सार ।।

—×—

निन्नानवेवाँ वचन

सच्चा त्याग और बैराग

त्यागी को सब कुछ प्राप्त होता है । बैरागी को पूर्ण सफलता होती है । जो त्यागी यह कहता है, कि मैंने सबका त्याग कर दिया, मुझे अब किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं रही, वह विभिन्न शब्दों में अपनी आत्म अवस्था का वर्णन करता है, जो पूर्ण है, क्योंकि पूर्ण ही को किसी वस्तु की इच्छा नहीं रहती । और लोग तो अपूर्ण होने के कारण से इच्छा के जाल में फँसे रहते हैं । जो बैरागी कहता है कि मैं राग रहित हूँ, और मुझे किसी से भी सम्बन्ध नहीं है वह पूर्ण है, वह ... और निज स्थिति की घोषणा करता है,

क्योंकि बैराग आत्मा ही का गौरव है। यह त्याग और बैराग की सूक्ष्म किन्तु स्पष्ट व्याख्या है।

राधा स्वामी मत में इस त्याग और बैराग का दूसरा रूप स्थापित किया गया है। असबात (एति) पसन्द होने के कारण वह गुरू के स्वरूप को इष्ट पद मानकर सब कुछ उसी पर न्यौछावर कर देता है। 'तन मन, धन सब गुरू पर अर्पण।" यह ग्रहण मार्ग है। बात वही है। दोनों अवस्थाओं का अभिप्राय एक ही है, यहाँ शिष्य सब कुछ दे दिलाकर बिल्कुल स्वतन्त्र हो गया है और इच्छा को अपने आधीन बना लिया है। वहाँ त्यागी और बैरागी ने छोड़ छाड़ कर स्वतन्त्रता प्राप्त करली है।

त्याग और बैराग नेति (नफी) का मार्ग है। और राधा स्वामी मत एति (असबात) का मार्ग है। एक तो नहीं, नहीं कहता हुआ भागता है, दूसरा हाँ हाँ की हाँक लगाता हुआ सब ग्रहण की हुई वस्तु को अपने इष्ट के अर्पण कर देता है, दोनों एक जैसे हुये या नहीं ?

वास्तव में न कहीं ग्रहण है न त्याग है ! यह काम करने के केवल ढंग हैं। छोड़ना सहल है या लेना आसान है ? त्याग और वैराग में सहारा नहीं होता। केवल ग्रहण और स्वीकार में सहारा रहता है हम स्वभावतः बिना सहारे के कोई काम नहीं करते। आदत ही ऐसी पड़ गई है, इस लिये प्रेम मार्ग एक प्रकार का ग्रहण मार्ग कहलाता है। गुरु का ग्रहण करना ही इसकी विशेषता है। अगर त्याग और बैराग को देने के अर्थों में बदल दिया जाय तो दोनों मार्ग समान हो जाते हैं वरना दूसरी हालत में न ग्रहण का असली अर्थ समझ में आता है और न त्याग ही का। लेने की अपेक्षा देने में अधिक

प्रसन्नता है। जो कर्म कि ब्रह्म के अर्पण कर दिया जाता है, वह पुरुष का कारण होता है।

'जो कर्म करो वह ब्रह्म के अर्पण करो।' कर्म और कर्म के भल को ब्रह्म के अर्पण करना एक बात हैं. लेकिन अपने आप ही को उसके अर्पण कर देना दूसरी बात है, यह प्रेम हैं, यह विभिन्न प्रकार का त्याग हैं, जिसे न त्याग ही कह सकते हैं और न ग्रहण। और साथ साथ यह दोनों हैं हम उसके हैं वह हमारा हैं, इससे अधिक एति (स्वीकृति और क्या हो सकता हैं। हम और हमारा कहने के लिये दो बातें हैं। आदि में यह द्वैत भी हैं लेकिन थोड़ा ही आगे चलकर द्वैत भाव का इस प्रकार अभाव हो जाता हैं जैसे गधे के सिर से सींग। इसका परिणाम यह होता हैं कि हमारे भाव हमारे नहीं रहते और अहम का मैं पना जाता हैं। हम किसी ऐसे भाव के आधीन रहते हैं जिसे न हमारा कह सकते है, और न तुम्हारा । यह अन्तिम दर्जे की समता हैं और इसका नाम ज्ञान हैं।

—×—

सौवां वचन

ज्ञान का आशय

ज्ञान का आशय जानना और समझना नहीं हैं किन्तु ज्ञान का आशय होना और हो जाना हैं, जो हम वास्तव में थे और होंगे। जो हमसे कभी पृथक नहीं था और न पृथक हो सकता हैं।

(१) मन तू शुदम तू मन शुदी मन तन शुदम तू जां शुदी।
ता कस न गोयद बादअजी. मन दीगरम तू दीगरी॥
मैं तू हुआ तू मैं हुआ, मन तन मेरा तू जां हुआ।
अब कौन कह सकता है यह, मैं और हूँ तू और है।

यह सीमित पने के दोष का नाश होना और असीमित बन जाना है। असीमित ही पूर्ण है और पूर्ण में कोई इच्छा नहीं रहती। इसी का नाम ज्ञान है।

यहाँ आकर न जानना है, न नहीं जानना है, ज्ञान और अज्ञान दोनों ही लोप हो जाते हैं। इस अवस्था का फिर कोई आदमी वर्णन करना चाहे तो कैसे कर सकता है। उपनिषद का वाक्य है जिसका अर्थ है:—"हम यह नहीं कह सकते, कि हम उसे अच्छी प्रकार जानते हैं, और न हम यही कह सकते हैं कि हम उसे नहीं जानते," यह ज्ञान और अज्ञान का मिलाप है। यह अंश और कुल का संयोग है। सीमा और असीमा दोनों ही लोप हैं। यहाँ न सीमितपने का दोष है न असीमितपने का गुण है। लो, अपूर्ण और पूर्ण की पहिचान जाती रही। न शिष्य रहा और न गुरू ही रह गया। क्या किसी में शक्ति है अब उनके बीच अन्तर बता सके। उपनिषद का कथन है:—"यतो वाचा निवर्तन्ते अप्राप्य मन्सा च आनन्दम् ब्रह्मणो विद्वान न विभेति कुतश्चन।" "वाणी ब्रह्म में जाकर विवश होकर लौट आती है। यही दशा मन की भी हो जाती है। लेकिन वह जो उसी के आनंद से जानता है, सम्पूर्ण भयों से स्वतन्त्र हो जाता है।" इसी उपनिषद के वाक्य की परम संत और आदि गुरू कबीर साहब ने और भी अधिक ज़ोरदार शब्दों में इस प्रकार कहा है :—

हद्द छोड़ बेहद्द गया, लिया ठीकरा हाथ।
भया भिकारी राम का, दर्शन पाय अनाथ ॥१॥
हद्द में पीव न पाइया, बेहद में भरपूर।
जो बेहद्द की गम लखे, ताको पीव हजूर ॥२॥
हद्द न रहा बेहद्द में, पल में देखे नूर।

॥ मनुष्य बनो ॥

हद छोड़ बेहद गया, सुन्न किया अस्थान ।
मुनिजन गम पावें नहीं, तहाँ मुझे विश्राम ॥४॥
हद छोड़ बेहद गया, रहा निरंतर होय ।
बेहद के मैदान में कबिरा सुख से सोय ॥५॥
हद में रहें जो मानवा, बेहद रहें जो साध ।
हद बेहद दोनों तजे उसका मता अगाध ॥६॥

जहाँ तक तन है वहाँ तक हद है। जहाँ तक कहने सुनने का संबंध है, वहाँ तक सीमितपना है। कहने वाला और सोचने वाला मनुष्य है, लेकिन जिसका मन और जिसकी बातें दोनों ही थक थका कर बेबस हो गये उसी का नाम साधू है। यहाँ न हद है न बेहद ही है, न अंश है न पूर्ण है न समुद्र है न बूंद है। न जीव है न ब्रह्म है। वह क्या है? कबीर साहब उसे अगाध कहते हैं। जिसमें बार पार तक नहीं है। न वह अब छिछला रहा, न गहरा रह गया। उसकी थाह भी कोई लेना चाहे तो किस प्रकार ले सकता है? थाह तो छिछले और गहरे की ली जाती है। जो थाह और अथाह दोनों ही से न्यारा है, वह कोई विचित्र वस्तु है जो वर्णन नहीं आती! जो वर्णन में आती है और जिसे मन सोच सकता है, वह माया है। माया नाम है अक़्ली माप और तमीजी पैमाने का। यहाँ माप और पैमाना नहीं रहता। अक़्ली माप ब्रह्म तक किसी न किसी सूरत में की जाती है। ब्रह्म असीमित है और इस ब्रह्म तक माया है, क्योंकि अगर ब्रह्म में माया न होती तो वह कहने सुनने का विषय कैसे होता! इसी कारण उसे राधास्वामी कहा गया, जो मन और वाणी दोनों से परे है। वहाँ इनकी गम नहीं है। यदि इनकी वहाँ तक पहुच संभव है और कोई व्यक्ति उनकी प्रशंसा कर सकता है तो फिर व नहीं है। राधास्वामी इष्ट और आदर्श है। केवल समझाने

बुझाने के लिये यह नाम रक्खा गया है अन्यथा उसका कोई नाम भी नहीं है। वह अनामी है। लेकिन क्या अनामी गुण नहीं है ? गुण वह भी है, परन्तु बिना गुण वर्णन किये हुये किसी को उसके अनुभव का अवसर कहाँ दिया जा सकता है विवश ऐसा संकेत किया गया है अन्यथा वह कहने सुनने की सीमा से पार है। जहाँ तक शब्दों का सम्बन्ध है वहां तक माया की कोई न कोई सूरत मौजूद है। इस कारण से चेतावनी देकर मौन होना पड़ता हैं। रामायण में कहा गया है कि :—

—×—

वचन १०१

आश्चर्य का विषय

यदि ऐसी दशा है तो फिर उसका कहना व्यर्थ है। बात भी सच्ची है। इसकी सचाई से इन्कार किसे है ! परन्तु कौन ऐसा मनुष्य है, जो इसे जानता हुआ भी कहने से अपनी जिभ्या को रोकता है। कहने वाले उसे कहते ही रहते हैं। सुनने वाले उसे सुनते ही रहते हैं। वह हर एक के कहने सुनने का विषय बना हुआ है। इससे अधिक विचित्र बात और क्या होगी। क्या यह आश्चर्य का विषय नहीं है ? है और अवश्य है।

फिर कहा सुना क्यों जाता है ? और कोई क्यों उसे कहता सुनता रहता है ? कारण यह है कि वह सब उसके भंडार से प्रगट हो रहे हैं। उसके प्रगट करने को चुप कौन कर सकता है ! हम जो करते धरते हैं उसी का तो प्रकाश हैं। हम जिसमें जो करते धरतें हैं, वही तो वह

और है क्या ? उस करने धरने को रोका कैसे जा सकेगा ? उसका अनुभव आनन्द है। हमारा अपना अनुभव भी आनन्द है। गूंगा गुड़ खाता है, बोल नहीं सकता, लेकिन गुड़ पने के स्वाद से वह अनजान नहीं है। वह बोले चाहे न बोले, लेकिन आनन्द और स्वाद की हालत उसमें मौजूद है। वह स्वयं वही है, वह उससे अलग नहीं है। यह कारण है कि उसका चर्चा हर समय होता रहता है। उसकी बात चीत में आनन्द आता है। वह आनन्द है और हम भी आनन्द हैं, आनन्द में आनन्द है, आनन्द में आनन्द लिया जा रहा है। मछली पानी है और पानी तो पानी ही है, यह पानी में पानी का आनन्द है, इसके अतिरिक्त और क्या है! उपनिषद के वाक्य हैं जिनका अर्थ है:—

ब्रह्म जो ब्रह्म को सत्त, चित्त और अनन्त और तमाम जीवों के हृदय रूपी गुफा में छुपा हुआ जानता है, जो हृदय रूपी आकाश की तरह सबमें व्यापक हैं उसकी तमाम कामनाऐं उस सर्व ज्ञान ब्रह्म के मिलाप से पूरी होती हैं।

हम जीवों को भ्रम है, और हम भ्रम में पड़े हुए उस जैसे होने की लालसा रखते हैं, क्योंकि अगर हम उस जैसे न हो जायेंगे, तो उसके गुणों से बंचित रहेंगे और हमारी इच्छाओं का क्रम कभी कटने पर न आयेगा। यह हमारे सब कहने सुनने, दुआ, प्रार्थना और कर्म धर्म का प्रयोजन हैं। सबको उसी की चाह है, सब दर पर्दा उसी की तलाश में हैं और जब तक खोज रहेगी, कहने सुनने के सिलसिले को समाप्त कौन कर सकता है। सब उसी से उत्पन्न हुए और समझे या बिना समझे उसी की ओर चले जा रहे हैं। समुद्र से बादल उठते हैं। आकाश पर चढ़ कर पहाड़ों पर बरसते हैं, और हजारों नदी नालों की सूरत में बहते हुए —शेष अगले अंक में

मासिक सन्देश

परमदयाल सद्गुरू हजूर मानव दयाल

(डा० ईश्वरचन्द्र शर्मा जी महाराज)

मेरी अपनी ही आत्मा के अंश

मेरे परम प्रिय सत्संगियों !

राधास्वामी, परम दयाल जी सहाई ।

पिछले मासिक सन्देश में मैंने आपको १६ सितम्बर १९९० तक के सत्संग दौरे की सूचना दी थी । बम्बई के हवाई अड्डे पर करीब २५ सत्संगी, आचार्या निर्मला पण्डित तथा उनके परिवार वाले, जिनमें से श्री रसूल आजाद, श्री ओमप्रकाश तिवारी, हैदराबाद से आये हुए श्री भगवान व्यास के नाम उल्लेखनीय हैं, हमारे स्वागत के लिये हवाई अड्डे पर मौजूद थे । इस बार श्रीमती सरला भान भी हवाई अड्डे पर उपस्थित थीं । मैं आपको यह बताना भूल गया कि आबूढाबी से श्री रवि पंडित की पत्नी हमारे साथ बम्बई चली थी । श्री रवि पंडित जी आचार्या निर्मला पंडित के सुपुत्र हैं, पूर्ण श्रद्धा और विश्वास रखते हैं । उनकी पत्नी रेनुका भी उतना ही अगाध विश्वास रखती हैं । यहां पर मैं एक बात बताना चाहता हूँ जो हर प्रकार के चमत्कार की व्याख्या श्रद्धा और विश्वास के आधार पर प्रमाणित करती हैं ।

मैंने पिछले वर्ष आपको बताया था कि हम श्री रवि पण्डित के विवाहोत्सव पर श्रीनगर गये थे । उसी दिन से ही रेनुका भी रति पण्डित की तरह सन्तमत में प्रविष्ट हो गयीं थी । अब वह पहली बार अपने पति के पास आबूढाबी जा

रही थी तो मैंने परम्परा के अनुसार रवि और रेनुका को पुत्र प्राप्ति के लिये फल का प्रसाद दिया था। यद्यपि हम अमेरिका से आते समय आबूढाबी न उतर सके थे, श्री रवि पण्डित ने गर्भवती रेनुका को आशीर्वाद के लिये हमारे साथ ही बम्बई भेजा। श्रीमती रेनुका ने १७ नबम्वर को बहुत ही सुलक्षण पुत्र को जन्म दिया। जब रवि पंडित पुत्र प्राप्ति के तुरन्त बाद मेरे पास होशियारपुर आये तो उन्होंने हमें बताया कि पाँचवे महीने के बाद आबूढाबी में, जब वहाँ के डाक्टर ने अल्ट्रा-साउंड से यह निदान किया कि आने वाला बच्चा लड़की हैं। तो रवि पंडित ने डाक्टर को कहा कि उनका निदान गलत है क्योंकि मानव दयाल जी महाराज ने उन्हें पुत्र प्राप्ति के लिये प्रसाद दिया था। वह डाक्टर हंसा और उसने कहा–'मिस्टर रवि पण्डित ! हमारा विज्ञान गलत नहीं हो सकता। मैं यह नहीं मान सकता कि तुम्हारे गुरु चमत्कार से लड़की से लड़का बना सकता है।' श्री रवि पंडित ने उत्तर दिया–'मेरे गुरु जी, कभी गलत नहीं हो सकते, क्योंकि सन्त मत की धारणा है सन्त मत पलटे नहीं, पलटे सब ब्रह्माण्ड।' डाक्टर को फिर भी विश्वास नहीं हुआ। किन्तु १७ नवम्बर, १९९० को श्री रवि पण्डित ने और रेनुका का विश्वास सत्य प्रमाणित हुआ। मुझे यहाँ पर दुबारा इस बात पर जोर देने की आवश्यकता नहीं है कि सन्त मत की शुद्धता और अगाध विश्वास वाला व्यक्ति ही इस प्रकार के चमत्कारों का अनुभव कर सकता है। यहाँ पर शुद्ध मन का अर्थ यही है कि साधक के मन में किसी प्रकार की ईर्ष्या, द्वेष और नफरत न हो। इसी सम्बन्ध में इसी मासिक सन्देश में सद्गुरु के महत्व की व्याख्या करते हुए इस विषय पर और प्रकाश डाला

मैं आपको बता रहा था कि हम १६ सितम्बर को बम्बई पहुँचे और सीध श्रीमती निर्मला पंडित के घर गये। वहाँ पर बहुत से सत्संगी पहले से मौजूद थे। काफी समय तक वे बात-चीत करते रहे। सांयकाल श्रीमती निर्मला पण्डित के घर के निकट एक मन्दिर में सत्संग आयोजित किया गया इस सत्संग पर बम्बई के बहुत से सत्संगी सम्मिलित हुए। जिस-जिस को पता चला वह दूर दूर से आये। सत्संग बहुत ही सफल रहा। सत्संगियों ने बहुत श्रद्धा और ध्यान से सत्संग का आनन्द प्राप्त किया।

इसी प्रकार १८ सितम्बर को भी प्रातःकाल का सत्संग हुआ और मैं कुछ पड़ोसियों के घर भी गया। १७ रात्रि को मैं श्रीमती निर्मला पण्डित के छोटे लड़के दीपक के घर पर रहा। दीपक की सुयोग्या पत्नी आरूषी ने हमारी बहुत सेवा की। १९ प्रातःकाल को दीपक और आरूषी रसूल आजाद के साथ मेरे समाधि में बैठे और वहाँ एक छोटा सा पारिवारिक सत्संग भी हो गया। १७ रात्रि को हम सरला भान के यहाँ ठहरे रसूल आजाद हमें हर जगह अपनी कार द्वारा ले गया। इसकी श्रद्धा, विश्वास और सेवा का कोई पारावार नहीं है। १८ रात्रि को विश्राम श्रीमती निर्मला पंडित के घर पर हुआ क्योंकि उसी सायंकाल को वहाँ सत्संग भी आयोजित किया गया था। हम १९ प्रातःकाल को वायुयान द्वारा बम्बई से रवाना होकर करीब साढ़े ९ बजे देहली पहुंच गये। उस दिन श्री के० पी० वर्मा के घर पर बहुत से सत्संगी परामर्श के लिये आते रहे। २० सितम्बर सायंकाल फरीदाबाद में हमारे निवास स्थान पर सत्संग आयोजित था। इस सत्संग में अभूतपूर्व भीड़-भाड़ थी। श्रद्धालु सत्संगी न केवल देहली फरीदाबाद से वरन दूर-दूर से आगरा और मथुरा से तथा

अन्य उत्तर प्रदेश के नगरों और गाँवों से इस सत्संग में सम्मि-लित हुए। यह सत्संग बहुत ही प्रभावशाली था और ऐसा लगा कि हमारा निवास स्थान आध्यात्मिकता का आकर्षण केन्द्र बन गया है। २१ सितम्बर प्रातःकाल मैं मानवता मंदिर में मासिक सत्संग के लिये नई दिल्ली से शाने पंजाब से रवाना होकर दिन के साढ़े बारह बजे जालन्धर पहुंच गया था। उसी दिन तीन बजे दुपहर को सन्तनगर जलन्धर में मेरे परम प्रिय त्रिलोक शर्मा के घर पर सत्संग आयोजित हुआ। कुमारी साधना और आचार्य शब्दानन्द जलन्धर पहुंच गये थे। सत्संग के बाद, हम कार द्वारा सायंकाल ६ बजे जलन्धर से होशियारपुर पहुंच गये।

यद्यपि छात्रों के मण्डल विरोधी आन्दोलन के कारण सारे भारत में स्थिति गम्भीर थी तथापि २२ सितम्बर को ही मासिक सत्संग के लिये हमारे सत्संगी भारी संख्या में दूर-दूर से मानवता मन्दिर पहुंच गये थे। उसी दिन सायंकाल एक बहुत ही प्रभावशाली सत्सग हुआ। २३ सितम्बर प्रातःकाल बटाला के सत्सगियों ने बड़ी श्रद्धा और उत्साह से सभी सत्संगियों की नाश्ते और चाय से सेवा की। यद्यपि बटाला के सभी सत्संगी बहुत उत्साही और परम श्रद्धालु हैं, तथापि मेरे परमप्रिय डा चन्द्रगनेश नेगी, मास्टर कुलदीप शर्मा, श्री रामप्रताप और श्री देवराज हरएक मासिक सत्संग पर अव-आते हैं। मैं सभी बटाला के सत्संगियों को सद्भावना और आर्शीवाद देता हूं और चाहता हूँ कि इन सत्संगियों का उत्साह, उनकी श्रद्धा और उनको सेवा भाव विश्व के सभी सत्संगियों को प्रेरणा दें। २३ सितम्बर का सत्संग अत्यन्त उत्कृष्ट और प्रेरणादायक था। ऐसा लगता था कि सत्संग के ... में सभी श्रोतागण समाधिस्त अवस्था में चले गये थे।

जहाँ तक मेरा प्रश्न है मैं केवल यही कह सकता हूँ कि मैं स्वयं एक अचेतन एवं परमानन्द की अवस्था में डूबा रहा। और होश आने पर मुझे ऐसा लगा कि मैं अपने आपको सत्संग दे रहा था।

सारे देश की कानून की व्यवस्था सितम्बर के पिछले सप्ताह में बहुत नाजुक थी। होशियारपुर से देहली के रास्ते सब बन्द हो गये और रेलगाड़ियाँ भी निरस्त कर दी गयी। इन अनिवार्य परिस्थितियों में मैं न तो मोदीनगर जा सका और न दशहरे के सत्संग पर देहली पहुंच सका। मेरे स्थान पर दशहरे के अवसर पर मेरा टेपरिकार्ड द्वारा सत्संग सुनाया गया और श्री के० पो० वर्मा तथा माता जी ने सत्संग सफल बनाया।

माता जी के कहने के अनुसार आचार्य के० पी० वर्मा का सत्संग बहुत ही प्रभावशाली था। अपने दशहरे के सत्संग के स्थान पर ४ नवम्बर १९९० को साल्वान पब्लिक स्कूल देहली में एक विशेष सत्संग कराने की घोषणा की। अक्टूबर का सारा महीना बिना किसी बाहरी दौरे के रहा। इस महीने में मासिक सत्संग २० अक्टूबर को सफलतापूर्वक मनाया गया। दैनिक तथा साप्ताहिक सत्संगों के अलावा इस महीने के दौरान में मेरा अधिक समय सत्संग आदि लिखने में 'गुलिस्ताँ हजार रंग' पुस्तक का अंग्रेजी अनुवाद करने और प्रतिदिन सत्संगियों की समस्यायें सुलझाने और परामर्श देने में गुजरा। जहाँ तक गुलिस्ताँ हजार रंग के अंग्रेजी अनुवाद का सम्बन्ध है इस पुस्तक के सम्पादक तथा संकलनकर्त्ता दातादयाल जी के वरिष्ठ जीवन शिष्य देहली निवासी श्री मोहनलाल जी के आग्रह पर किया जा रहा है। इस अनुवाद में मुझे विशेष आनन्द प्राप्त हो रहा है। उसका एक कारण यह है कि इस

पुस्तक में जितने दातादयाल जी के, कबीर साहब के और दूसरे ऋषियों और सन्तों के छन्दबद्ध शब्द हैं उन सबका अनुवाद मैं अंग्रेजी कविता में कर रहा हूँ। कई बार ऐसा लगता है कि मेरा अनुवाद–अनुवाद नहीं, बल्कि एक सजग मौलिक कविता है। जब यह पुस्तक अंग्रेजी भाषा में छपेगी, तो पश्चिम में यह बहुत ही चाह से पढ़ी जायेगी, जिसके फलस्वरूप राधास्वामी मत एवं मानवता धर्म का भी विश्व में भी प्रचार हो जायेगा।

नवम्बर के महीने में मानवता मन्दिर की मुख्य गतिविधि १८, १९ नवम्बर को परमदयाल जी महाराज की जन्मबरसी मनाया जाना और २६ नवम्बर को अमेरिका की संस्था ए. आर. ई. के २ सदस्यों का मानवता मन्दिर में आगमन और उनके स्वागत मे एक विशाल सत्संग आयोजित था। १८, १९ नवम्बर के उत्सव पर सत्संगी भारी संख्या में दूर–दूर से उत्साहपूर्वक सम्मिलित होने के लिये आये। इस उत्सव की बीडियो फिल्म ली गयी है, जो सत्संगियों को समय-समय पर दिखायी जायेगी। ए. आर. ई. के २० सदस्यों का शिष्ट मंडल २५ नवम्बर को न्यूयार्क से देहली पहुँचा था। उसी दिन सायंकाल मैंने इस शिष्टमन्डल को ओबेराय होटल दिल्ली में सम्बोधित किया। इस शिष्ट मंडल के निर्देशक डा० चार्ल्स टामस के० सी० ने अपने प्रवचन में कहा कि वे महाराज जी के बहुत कृतज्ञ हैं, क्योंकि उन्हीं की प्रेरणा से ही यह शिष्ट मन्डल भारत और नेपाल का दौरा करने के लिये आया था। डा० चार्ल्सटामस केसी अमेरिका के विख्यात की सिद्धि प्राप्त सन्त स्वर्गीय श्री एडगर केसी के पोते है और अमेरिका की उस अन्तराष्ट्रीय ए. आर. ई. संस्था के अध्यक्ष हैं, जिसने ५ बार परमदयाल परमसन्त पंडित फकीरचन्द्र जी महाराज को

अपनी संस्था में सत्संग देने के लिये अमेरिका आमन्त्रित किया था। परमदयाल जी महाराज ने १९६९ में इसी ही संस्था के उस शिष्ट मंडल को दहली के मेडन होटल में सत्-संग दिया था, जिसका नेतृत्व उस समय डा. चार्ल्सटामस केसी के योग्य स्वर्गीय पिता श्री ह्यूलिन केसी ने किया था। पाँच वर्ष पूर्व श्री ह्यूलिन केसी का स्वर्गवास हो गया। १९६९ वाले शिष्टमण्डल ने सारे विश्व का दौरा किया था और तीर्थ स्थानो का भ्रमण करने के अलावा विश्व के आध्यात्मक नेताओं को भी मिला।

यहाँ पर मैं आपको याद दिलाना चाहता हूँ कि यह शिष्ट मण्डल यूरोप में अनेक सिद्ध प्राप्त व्यक्तियों को मिला। उनमें से हालैंड का एक ऐसा व्यक्ति था, जिसने उनकी आँखों के सामने एक ऐसे कुत्ते को स्वस्थ कर दिया जो मोटरगाड़ी की दुर्घटना में जख्मी हो गया था, और उसकी एक टाँग टूट गई थी। उस व्यक्ति ने अपने हाथों की किरणों से उस कुत्ते को स्वस्थ कर दिया। भारत में भी यह लोग अनेक आध्यात्मिक नेताओं और सिद्ध प्राप्त व्यक्तियों को मिले। फिलीपीन में यह ऐसे सिद्ध प्राप्त लागों को मिले जो मरीजों के सूक्ष्म शरीर की शल्य चिकित्सा करके उन्हें रोग मुक्त कर सकते हैं। फिलिपीन में इन्होंने ऐसे लोगों का तमाशा भी देखा जो नंगे पांव जलते हुए अंगारों पर चल सकते थे। जब यह लोग विश्व के भ्रमण के बाद न्यूयार्क पहुंचे तो ह्यूलिन केसी ने हजारों लोगों की सभा में वक्तव्य देते हुए कहा "हमारे इस दौरे पर हमारी सबसे बड़ी उपलब्धि परमसन्त परमदयाल हजूर फकीरचन्द जी महाराज से भेंट थी। इस समय विश्व में वह सबसे ऊँचे और सच्चे सन्तों में से हैं, और इनके विचार और अनुभव मेरे दादा एडगर केसी से मेल खाते हैं।" इस

सभा में मैंने भी अपने विचार प्रकट किये थे, जिसके फलस्वरूप ए. आर. ई. की संस्था मानवता मन्दिर से सहयोग करने लगी। इसके बाद ही ए. आर. ई. ने परमदयाल जी को अमेरिका में आमन्त्रित करना आरम्भ किया।

२५ नवम्बर १९९० डा० चार्ल्सटामस केसी तथा उनका शिष्टमण्डल मेरे साथ फ्रन्टीयर मेल के द्वारा रात्रि को दिल्ली से रवाना होकर प्रातःकाल साढ़े चार बजे जलन्धर पहुँचा। जलन्धर में एक होटल पर नाश्ता करने के पश्चात हम सब एक वातानुकूलित बस में मानवता मन्दिर होशियारपुर पहुँचे यहाँ पर इन सबका भव्य स्वागत किया गया। मानवता मंदिर मुख्य द्वार से लेकर प्राँगण तक सजा हुआ था। प्राँगण में बहुत ही सुन्दर शामियाना लगा था। मंच के ऊपर स्वागत के अँग्रेजी भाषा में वाक्य लिखे थे। शामियाने का नील वर्ण था और सारा मडप नीले रंग में निखर रहा था। मंच पर विदेशी अतिथियों के कारण कुर्सियां लगी हुई थीं। ज्यों ही हम लोग बस से उतरे आचार्य शब्दानन्द, कु० साधना सक्सेना श्री एस० एल० सेठी, प्रिंसीफल भारद्वाज जी, नरायनदास डोगरा तथा अन्य मानवता मन्दिर के कार्यकर्ताओं और ट्रस्ट के सदस्यों ने हम सब का फूल मालाओं से स्वागत किया। शिष्टमण्डल के सभी सदस्य इस स्वागत से अत्यन्त प्रभावित और प्रफुल्लित हुए। यह सभी लोग मेरे पीछे-पीछे डा० चार्ल्स टामस केसी के नेतृत्व में परमदयाल जी की समाधि पर श्रद्धांजलि देने के लिये आये और इसके बाद उन्हें परमदयाल जी महाराज की मूर्ति का अनामी मन्दिर में दर्शन कराया गया।

इसके बाद सभी लोग मण्डप में आ गये और उत्सव की कार्यवाही आरम्भ हुई। आचार्य शब्दानन्द ने अंग्रजी भाषा में

आगन्तुकों का स्वागत किया और बहुत ही अच्छे ढंग से उन्हें बताया कि परमदयाल जी महाराज द्वारा मानवता मन्दिर आज भी सुयोग्य नेतृत्व में विश्व में मानवता को जगाकर विश्व शान्ति के उद्देश्य में आगे बढ़ रहा है। मैं आपको इस उत्सव की संक्षिप्त सूचना इसलिये दे रहा हूँ क्योंकि आप वीडियो फिल्म में इस सारी कार्यवाही को देख सकते हैं। चार्ल्सटामस केसी ने अपने प्रवचन से पहले सभी उपस्थित सत्संगियों को और ए. आर. ई. के सदस्यों को थोड़ समय के लिए आँखें बन्द करके समाधि लगाने को कहा और उनके अन्त में भारत तथा विश्व के कल्याण की कामना की। डा० केसी ने बताया कि वह भारत में और विशेषकर मानवता मन्दिर में उनमूल तत्वों को समझने के लिए आये हैं, जिनके आधार पर उनके पितामह श्री एडगर केसी ने पश्चिम में आध्यात्मिकता का प्रचार किया था।

साधु आश्रम के डा० कृष्णमुरारी ने अपने द्वारा रचित संस्कृत में कविता का पाठ किया। जिसमें उन्होंने मानवता अतिथियों का स्वागत किया। मेरे सत्संग के आरम्भ होने से पहले श्रीमती सीता देवी ने शब्द पढ़ा और कुमारी साधना ने 'ज्ञान दीजे ज्ञान दाता ज्ञान के भण्डार से' दातादयात के शब्द का पाठ किया। आचार्य शब्दानन्द ने इसी शब्द का अंग्रेजी भाषा में छदबद्ध अनुवाद पढ़कर सुनाया। मेरा सतसंग द्विभाषी था, क्योंकि मैंने पहले हिन्दी में फिर अंग्रेजी भाषा में अपने अनुभव और विचार प्रकट किये। मैंने सत्संगियों को बताया कि यद्यपि ए आर. ई. की संस्था मानवता मन्दिर और परमदयाल जी से सन् १९६९ से सम्बन्धित चली आई है और यद्यपि भारत में उनका यह चौथा शिष्टमण्डल आया था, तथापि पहली बार ही यह शिष्टमण्डल मानवता मंदिर

होशियारपुर में आया। यह एक प्रसन्नता का विषय था कि परमदयाल जी महाराज के विचारों से प्रभावित यह अन्तर्राष्ट्रीय संस्था मानवता मन्दिर की यात्रा की प्रबल इच्छा को पूरी कर सका। अमेरिकन अतिथि हमारे सत्संगियों के बीच बैठे हुए पूर्व और पश्चिम के मिलाप को प्रगट कर रहे थे। जब दातादयाल जी का शब्द पढ़ा जा रहा था, तो सभी अमरीकी अतिथि आँखे बन्द करके संगत का आनन्द ले रहे थे और डा० केसी तो समाधिस्त हो गये थे।

मैंने हिन्दी में अपने सत्संगियों को बताया कि ए. आर. ई. की सदस्यों का मानवता मन्दिर में आना आध्यात्मिकता के इतिहास में और मानवता मन्दिर के इतिहास में एक खास महत्व रखता है। मानवता धर्म और ए. आर. ई. की संस्था जिसका अर्थ 'खोज और आत्मज्ञान की संस्था" है, एक ही उद्देश्य को लेकर चल रही हैं। मैंने सत्संगियों को अवगत कराया कि परमदयाल जी महाराज ने किस प्रकार १९७२, १९७६, और १९७८, १९८० में अमेरिका में ए. आर. ई. संस्था में किस प्रकार अपने सत्संगों पर अमृत वर्षा की थी।

मैंने यह भी बताया कि किस प्रकार पिछलेवर्षों में ए.आर. ई. और मानवता मन्दिर मिलकर सहयोग से विश्व में आध्यात्मिकता का प्रचार कर रहे हैं। डा० चार्ल्स टामस केसी के पितामह श्री एडगर केसी ने सन् १९१० से ही अपनी समाधिस्त अवस्था के अनुभवों के आधार पर अमेरिका में पुर्नजन्म और कर्म के सिद्धान्तों का प्रचार किया था। अंग्रजी में सत्संग देते हुए मैंने अतिथियों को आत्मज्ञान का परिचय देते हुए राधास्वामी नाम का महत्व भी बताया और उनका ध्यान ईसाई धर्म में गुप्त सुख-शब्द योग की ओर से आकर्षित किया

प्रकाशित हो जायेगा। इसलिये यहाँ पर मैं इतना कहना चाहता हूँ कि इस उत्सव पर प्रिंसीफल एस० एन० भारद्वाज जी ने अन्त में अतिथियों को धन्यवाद देते हुए एक बहुत ही उत्कृष्ट सत्संग दिया।

मानवता मन्दिर की ओर से अतिथियों को और बहुत से सत्संगियों को दुपहर का भोजन दिया गया। हालांकि अमरीकी अतिथियो ने दहली में ऊँचे से ऊँचे होटल में खाना खाया था, तथापि जिस प्रेम भाव से उन्हें मानवता मन्दिर में भोजन दिया गया वह उससे बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने भारतीय व्यजनों का आनन्द लेते हुए बहुत उत्साह से भोजन खाया, क्योंकि मैं, उनके साथ धर्मशाला, बनारस, उदयपुर और दिल्ली में भी रहा। वह अन्त तक यही कहते रहे कि जो भोजन का आनन्द उन्हें मानवता मन्दिर में मिला उसका अन्यत्र किसी जगह भी मुकाबला नहीं। इस सम्बन्ध में मुझे कहना पड़ेगा कि हमारे सत्संगियों और मानवता मंदिर के उन महिलाओं को इसका श्रेय मिलना चाहिए। इस सम्बन्ध में श्रीमती रेणु खन्ना श्रीमती रामा नन्दा, श्रीमती राजकुमारी श्रीमती स्वदेश मल्हत, कु० साधना और कु० पूजा के नाम उल्लेखनीय हैं। भोजन के बाद सभी ए. आर. ई. के सदस्य मेरे उस कक्ष में एकत्रित हुए, जिसमें परमदयाल जी महाराज समाधि में बैठा करते थे। यहां पर वह सब २० मिनट तक समाधि में बैठे। बाद में उन्होंने मुझे बताया कि उन्होंने अपने जीवन में, जो समाधि का आनन्द उस कक्ष में अनुभव किया वह और कहीं नहीं किया था। इसके फौरन बाद सभी अतिथि धर्मशाला जाने के लिए बस में बैठने लगे। मैंने देखा कि उनमें से एक महोदय श्री ब्रिगमाण्ड अभी तक मेरे कक्ष में समाधि में बैठे हुए थे। उनको बड़ी मुश्किल से उठाया गया। बाद में

उन्होंने मुझे बताया कि वह एक बार फिर मानवता मन्दिर में विशेषकर समाधि के लिये आना चाहते हैं।

संक्षेप में, मैं आपको बताना चाहूँगा कि यह शिष्ट मण्डल बनारस और नेपाल गया। समय के अभाव के कारण मैं उनके साथ केवल बनारस तक गया और दो दिसम्बर को होशियारपुर वापस आ गया। बनारस में भी अशोका होटल में एक सत्संग हुआ जिसमें लखनऊ, इलाहाबाद और बनारस तथा खानपुर के हमारे सत्संगी सम्मिलित हुए, क्योंकि बनारस के बाद मैं तीन दिन होशियारपुर में रहा। पाँच दिसम्बर को मैं सुपरफास्ट ट्रेन के द्वारा जलधर से रवाना होकर ४ बजे सायंकाल नई दिल्ली पहुंच गया, क्योंकि उसी दिन ए. आर. ई. का शिष्ट मन्डल भी नेपाल से वापस आ गया था। हाली के मेकर्स आफ इंडिया के मालिक श्री ओ० पी० आहूजा ने मेरा ठहरने का प्रबंध भी शिष्ट मण्डल के साथ शेराटन ताज होटल में कर दिया, किंतु मैं सायंकाल श्री के० पी० वर्मा के घर गया और होटल को बजाय मैंने श्रीमती सुधा वर्मा के द्वारा प्रेम से बना हुआ भोजन किया। मैंने श्री के० पी० वर्मा को मेरे साथ होटल में रात को ठहरने का आग्रह किया, जिसको उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया। प्रातःकाल ४ बजे श्री धर्मेंद्र गुप्ता तथा उनकी सुभोग्या पत्नी हमें हवाई अड्डे पर ले गये क्योंकि मेरी उड़ान साढ़े पाँच बजे प्रातः की थी। उदयपुर जाते हुए हमारा वायुयान आधे घण्टे के लिये जयपुर हवाई अड्डे पर रुका। यद्यपि उदयपुर के यात्रियों को जयपुर हवाई अड्डे के अंदर जाने की आज्ञा नहीं थी। सौभाग्यवश मुझे किसी ने न रोका और के वायुयान से उतर गया। इसका कारण यह था कि हवाई अड्डे पर मेरे भाई श्री महाराज कृष्ण शर्मा, भाग्यमाता जी श्री घनश्याम और जयपुर के करीब आठ-दस सत्संगी

मुझे मिलने के लिये हवाई अड्डे पर मौजूद थे। इन सबने बड़ी श्रद्धाओं से मेरा फूल मालाओं से स्वागत किया। इन्होंने मुझे बताया कि उसी दिन जयपुर में श्री मोतीचन्द्र गोलच्छा ने भाग्यमाता जी की उपस्थित को ए. आर. ई. शिष्ट मन्डल के लिये एक शानदार सभा का आयोजन किया था। बाद में जब ए. आर. ई. के लोग मुझे दूसरे दिन उदयपुर में मिले तो उन्होंने बताया कि जयपुर में उनका स्वागत अत्यन्त शानदार था।

मैं उदयपुर ६ दिसम्बर को ही प्रातःकाल पहुच गया। उदयपुर विश्वविद्यालय को दर्शन विभाग की रीडर डा० गिरजा व्यास ने मेरा हवाई अड्डे से उदयपुर विश्वविद्यालय के विश्राम गृह तक पहुचने के लिये एक कार भेज दी थी। सारा दिन मेरे पुराने छात्र और उदयपुर विश्वविद्यालय के प्रोफेसर मुझे मिलने के लिये आते रहे। डा० गिरजा व्यास और श्री जे० सी० मैसी काफी समय तक मेरे पास रहे। उन्होंने मुझे बताया कि ७ और ८ दिसम्बर को उन्होंने चार स्थानों पर ए. आर. ई. के शिष्ट मंडल के स्वागन का प्रबन्ध किया था। दूसरे दिन प्रातःकाल ए. आर. ई. का शिष्टमण्डल Palacc on Wheele नामक रेलगाड़ी के द्वारा उदयपुर नगर के स्टेशन पर पहुंचा। प्रातःकाल ९ बजे से १२ बजे तक उन्होंने सिटी पैलेस आदि का दौरा किया। और सायंकाल ३ बजे वे सब वातानुकलित बस में सहेलियों की घाड़ी आदि भव्य स्थानों को देखने के लिये गये। सायंकाल ६ बजे हमारे ए. आर ई. के सदस्यों ने अन्य यात्रियों से अलग होकर मेरे साथ 'मीराकला निकेतन के' प्रोग्राम पर जाने का निर्णय किया हाँ मैं आपको बताना चाहता हूं कि Palace on Wheels राजस्थान सरकार द्वारा चलाई गई एक शानदार रेलगाड़ी है

जिससे हरएक यात्री से दस हजार रुपये प्रतिदिन लिया जाता है और उन्हें भोजन आदि भी रेलगाड़ी में दिया जाता है। ए. आर. ई अतिरिक्त उस रेलगाड़ी में ७० के करीब अन्य विदेशी यात्री भी थे। इन सभी यात्रियों का उदयपुर में भ्रमण Palace on Wheels की ओर से था और यह सब इकट्ठ ही दो बसों में शहर का भ्रमण करने के लिये निकले थे किन्तु ६ बजे ए आर, ई. के सदस्य इनसे अलग हो गये, क्योंकि उन्होंने कला निकेतन में हमारे साथ साँस्कृतिक कार्यक्रम में शामिल होने के लिये जाना था। इस कला निकेतन का संचालन मेरे एक पुराने मित्र श्री आर० सी० भट्ट कर रहे हैं। भट्ट जी राजस्थान सरकार से शिक्षा विभाग के अवकाश प्राप्त निर्देशक हैं, और सार्वजनिक सेवा में लगे हुए हैं। उनकी संस्था ने छोटे बच्चों से लेकर प्रौढ़ कलाकारों द्वारा गायन, वाद्य संगीत, नृत्य और नाटक का बहुत सुन्दर कार्यक्रम प्रस्तुत किया। ए. आर. ई. के सदस्यों ने कहा कि यह कार्यक्रम पूरा चलना चाहिए, हालांकि ऐसा करने से उन्हें आवश्यकता से अधिक वहाँ देरी तक बैठना पड़ा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह कार्यक्रम बहुत उच्च कोटि का और आकर्षक था। मेरे प्यारे अमरीकन जिज्ञासुओं ने इस प्रोग्राम को बहुत ही पसन्द किया। वहाँ हम सब काफी देर तक रहे। इसका परिणाम यह हुआ कि शिष्टमण्डल बिना रात्रि का भोजन किये ८ बजे ही स्थल आश्रम पर आदरणीय महन्त श्री मुरली मनोहर शरन द्वारा आयोजित सार्वजनिक सभा में सम्मिलित हुए। यह कार्यक्रम दो घण्टे तक चला। यहां पर अन्य विद्वानों के अतिरिक्त डा० गिरजा व्यास ने बहुत अच्छा स्वागत भाषण दिया सभा के आरम्भ में मेरा और सभी ए. आर. ई. के सदस्यों का व्यक्तिगत रूप से श्रृद्धापूर्वक फूल मालाओं द्वारा स्वा-

गत किया गया। ए. आर ई. के सदस्य इस स्वागत को देख कर कृत्य हो गये और उनकी आँखों में प्रसन्नता के अश्रु टपक पड़े। मैंने ए. आर. ई. की संस्था का परिचय दिया। डा० चार्ल्सटामस केसी ने बहुत ही अच्छा 'पुर्नजन्म और कर्म सिद्धाँत' के बारे में प्रवचन दिया और कहा कि वे लोग भारत में आध्यात्मिकता की उन जड़ों से सम्बन्धित होने के लिये और सीखने के लिये आये हैं, जिनके आधार पर उनके पिता– मह एडगर केसी ने एक ऐसे दर्शन का प्रचार किया, जिसके अनुसार पुर्नजन्म कर्म सिद्धाँत और समाधि को इसाई धर्म के अंग मान लिया गया। महामहिम महन्त श्री मुरली मनोहर शरण ने अपने स्वागत भाषण में वैदिक विचार में परामनो– विज्ञान की व्याख्या करते हुए बताया कि समाधि द्वारा हरएक व्यक्ति में सिद्धियाँ उत्पन्न हो सकती हैं। जब उन्होंने सभी उपस्थित भारतीय और अमेरिकन श्रोताओं को थोड़ी देर के लिये समाधि लगाने के लिये कहा और उन्होंने स्वय इस समाधि का नेतृत्व किया, तो उन्होंने सभी का ध्यान ए आर. ई. की बर्जीनिया से आई हुई उस महिला की ओर आकर्षित किया जो पदमासन लगाकर बैठी हुई थी। उन्होंने सैकड़ों भारतीय श्रावकों और छात्रों को कहा कि उन्हें इस महिला से शिक्षा लेनी चाहिए। महन्त जी ने ओंकार की ध्वनि से ऐसी गहन समाधि लगवाई कि सभी सम्मिलित होने वाले लोगों पर मस्ती छा गई। वातावरण पवित्र हो गया।

दूसरे दिन प्रातःकाल साढ़े ८ बजे उदयपुर विश्वविद्यालय में इस शिष्ट मण्डल के लिए छात्रों और प्राफेसरों की एक सभा आयोजित की गई जिसमें उदयपुर विश्व विद्यालय के कला सकाय के निर्देशक डा० मूलचन्द्र शर्मा भी सम्मिलित हुए। इस आयोजन में डा० चार्ल्सटामस केसी ने अपने

में बताया कि उनकी संस्था किस प्रकार कर्म और पुर्नजन्म के सम्बन्ध में लगातार खोज कर रही है। मुझे यह देखकर प्रसन्नता हुई कि डा० मूलचन्द्र शर्मा, जो मेरे शिष्य रहे हुए हैं, कला संकाय के निर्देशक और संस्कृत विभाग के अध्यक्ष होते हुए भी अंग्रेजी भाषा में बहुत सुन्दर ढंग से बोले और उन्होंने शिष्टमण्डल को उदयपुर विश्व विद्यालय के अनुसंधान के सम्बन्ध में विस्तृत व्याख्या दी। इसी प्रकार मेरे दूसरे शिष्य डा० श्यामराव व्यास ने दर्शन विभाग के सम्बन्ध में अनुसंधान का परिचय देते हुए शिष्टमण्डल को बताया कि उनका अपना पी. एच. डी. का विषय भी पुर्नजन्म और कर्म सिद्धाँत था। जो उन्होंने अपनी देखरेख में आरम्भ किया था। डा० केसी इन सब प्रवचनों से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने घोषणा की कि वह उदयपुर विश्वविद्यालय में 'पुर्नजन्म और कर्म' के अनुसंधान के लिये एक पीठ काम करने के लिये अनुदान देंगे।

इसके बाद शिष्टमण्डल के सभी सदस्य तीन बालकों के उपनयन संस्कार में सम्मिलित होने के लिये डा० गिरजाव्यास के घर पर गये। उनका यह अनुभव उनके लिये बहुत ही रोचक था। उनमें से तीन सदस्यों ने उस उत्सव की वीडियो-फिल्म ली। इसके तुरन्त बाद वे सब Palace on Wheels द्वारा एक बजे दुपहर जैसलमेर के लिये रवाना हो गये। उन्होंने उदयपुर के सभी कार्यक्रमों की बहुत सराहना की। और कहा कि उनके जीवन में, उनका उदयपुर का दौरा एक अमिट स्मृति रहेगा। मैं ६ दिसम्बर को ही वायुयान द्वारा सायंकाल साढ़े पाँच बजे तक दहली पहुंच गया। १३ दिसम्बर को उस शिष्ट मण्डल को विदा करके, हम १४ दिसम्बर को

शाने पंजाब द्वारा दिल्ली से रवाना होकर ३ बजे दुपहर तक होशियारपुर पहुँच गये। जहाँ तक इस मासिक सन्देश का सम्बंध है, सत्संग दौरे की ऊपर दी गई सूचना पर्याप्त रहेगी। समय और स्थान के अभाव के कारण मुझे संत मत के पहले सोपान सद्गुरु की व्याख्या अगले मासिक संदेश तक स्थगित करनी पड़ रही है। मैं इसलिये आपसे क्षमा चाहता हूँ और आशा करता हूँ कि सद्गुरु सोपान के सम्बंध में मैं आपको अगले महीने सुंदर रूप से यह बताऊँगा कि सद्गुरु का क्या अर्थ है और क्या महत्व है? इन शब्दों के साथ मैं आपको इस महीने की शुभकामना भेजता हूँ और सच्चे दिल से चाहता हूँ कि यह संदेश आपके लिये सुखद और लाभप्रद प्रमाणित हो।

सबको हार्दिक आशीर्वाद और राधास्वामी!

आपका फकीरमय
मानव

—×—

धन्यवाद!

श्री लडैतेलाल वर्मा कन्नौज ने ११) रु० 'मनुष्य बनो' की सहायतार्थ भेजे हैं।

R. S.

शब्द

पढ़ पढ़ के वक्त गंवाया हैं ।
पर भेद न तेरा पाया है ॥

१. हर्फा दी हेरा फेरी ए, पर मन बिच नहीं दिलेरी ए,
ख्वाहिशों दी झुल्ली हनेरी ए,
हर थां तो एस गिराया है, पढ़ पढ़ के वक्त गंवाया है

२. अज धर्म दा दिखलावा ए, पाखंड दी वाद विवाद ए,
हर इक नूं सच दा दावा ए,
सबनूं माया भरमाया है पढ़ पढ़ के वक्त गंवाया है

३. मन अपने अन्दर बड़दा नहीं, इंद्रियां काबू करदा नहीं,
आसमानाँ उत्ते चढ़दा नहीं,
एनूं काम और क्रोध सताया है, पढ़ पढ़ के वक्त गंवाया है

४. बिन गुरु दे रास्ता मिलदा नहीं; पता लगदा तीसरे तील
दा नहीं, यह घाट बदलदा दिलदा नहीं,
ऐन काल ने गोद बिठाया है, पढ़ पढ़ के वक्त गंवाया है

५. एक जन्म दोबारा मिलदा नहीं, बिन नाम कमल यह
खिलदा नहीं, जल्दी कस्सो बेला ढिलदा नहीं,
मुक्ति तेरा सरमाया है, पढ़ पढ़ के वक्त गंवाया है

६. सर धड़ दी बाजी लाके ते, सर अपना, तली टिकाके ते,
गुरु घरणा दे बिच जाके ते,
एह चंचल मन ठहराया हैं, पढ़ पढ़ के वक्त गंवाया है

७. दो नयनन ताला लाके ते, वृत्ति अंदर उल्टां के
सुरत दसवें द्वार चढ़ा के ते
... ... ते म न पाया है, पढ पढ़ के वक्त गंवाया है

८. तू क्यों पया धक्के खानाऐं,क्यों कीमती वक्त गंवाना ऐ,
क्यों मुर्शिद नूं शर्मानाऐ, 'गाफिल' ने गुरु नू पाया है ।।
पढ़ पढ़ के वक्त गंवाया है ।।

—×—

शब्द

दिल की सब कुलफत दूर हुई, तेरा दीदार किया जब मैं ।
सदियों की प्यास बुझी मेरी, चरणामृत तेरा पिया जब मैं ।

तेरी अजमत को कोई क्या जाने, तुमको कोई कैसे पहचाने ।
मैं अंधा और नावीना था खुली आंख यह सिजदा किया जब मैं

दुनियाँ तो नफरत करती थी, अपने भी बेगाने बनते थे ।
अब सब कोई प्यार लगा करने,बस तेरा सहारा लिया जब मैं ।

पागल दीवाना बन करके, घर घर की खाक छानता था ।
वही खाक लगी पेशानी पर, अंदूनी जलाया दीया जब मैं ।।

इस जिसम की होश गंवाई थी,यह दुनियाँ दिल से भुलाई थी ।
हर जगह में तुमको देख लिया यह दामन चाक सिया जब मैं ।।

तेरी मौहब्बत का भूखा, दिन रात चिल्लाता रहता था ।
शाह रंग से भी नजदीक मिला,सर का नजराना दिया जब मैं ।।

मैं तुमसे कभी जुदा न था, गुमराही थी जो जुदा समझा ।
मुर्शिद ने इशारा दिया 'गाफिल', इसको तसलीम किया
जब मैं ।७।

—(गाफिल शब्दावली से)—

—×—

"मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र) समाचार प (केन्द्रीय) अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ के अनुसार अपेक्षित आवश्यक सूचना

१—प्रकाशन का स्थान	:	अलीगढ़
२—प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३—मुद्रक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
क—राष्ट्रीयता	:	भारतीय
ख—पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़।
४—प्रकाशक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।
५—सम्पादक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।
६—स्वत्वाधिकारी	:	श्रीमती सुधा मीतल
संरक्षक	:	परमदयाल फकीरचन्द्र जी महाराज

७—मैं सुधा मीतल घोषित करती हूं कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विवरण के अनुसार सही है ।

दिनांक १५ नव०, १९८८

सुधा मित्तल

प्रकाशक के हस्ताक्षर

Rgd. NO L—ALG.28

मिलने का पता :–

'मनुष्य बनो' कार्यालय

शिव भवन, लेखराज नगर

अलीगढ़ – २०२००१ (उ० प्र०)

अवैतनिक सहायक सम्पादक

महेशचन्द्र मीतल

सम्पादक, व्यवस्थापक व प्रकाशक

श्रीमती सुधा मीतल

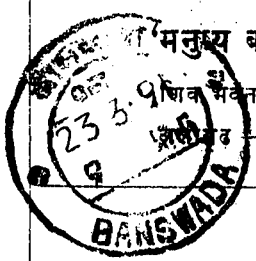

BANSWADA 23 3 9

ग्राहक संख्या— 170

श्रीमान Sri Chilwar Narsimhlu

Book - Seller

V & PO. Banswada Mandal

Nizamabad. AP.